P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-2* * (Part-1) October- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

भारत के उच्चतम न्यायालय का "विरल से विरलतम" सिद्धान्त और उसकी प्रासंगिकता, औचित्य तथा विधिक प्रभाव

(मृत्युदण्ड की गैरवापसीय गम्भीरतम स्थिति की परिणति है भारत के उच्चतम न्यायालय का "विरल से विरलतम" सिद्धान्त)

राजेश बहुगुणा
प्राचार्य एवं डीन,
लॉ कालेज,देहरादून,
उत्तरांचल विश्वविद्यालय

सुमेर चन्द रवि
शोध छात्र,
विधि विभाग,
उत्तरांचल विश्वविद्यालय,
देहरादून

सारांश

प्रस्तुत "उच्चतम न्यायालय का विरल से विरलतम सिद्धान्त" की प्रासंगिकता, औचित्य और न्यायिक प्रभाव सिद्ध हो सके इस कारण महत्वपूर्ण वादों का मार्गदर्शन लेते हुए प्रस्तुतिकरण किया गया है जिनमें कुछ महत्वपूर्ण वाद जैसे – राजेन्द्र प्रसाद बनाम उत्तर प्रदेश, कुन्जु कुन्जु जनार्दन बनाम केरल राज्य, शिव शंकर दुबे बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, बिशनु देव शा बनाम वेस्ट बंगाल, शिदागाउदा निनगप्पा घंटुवार बनाम कनार्टक, मारूराम बनाम इंडिया, बचन सिंह बनाम पंजाब, सर्वेश्वर प्रसाद शर्मा बनाम मध्य प्रदेश, दूधनाथ पांडे बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, मुनीयप्पन बनाम तमिलनाडु, किशोरी बनाम स्टेट ऑफ दिल्ली, माझी सिंह बनाम पंजाब राज्य, कुलजीत सिंह (रंगा) बनाम भारत संघ, धनंजय चटर्जी उर्फ धन्ना बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, अशर्फीलाल बनाम उत्तर प्रदेश, मगन लाल बनाम मध्य प्रदेश राज्य, देहरादून का रणवीर सिंह फर्जी मुठभेड केस, दिल्ली का निर्भया सामूहिक बलात्कार केस,मुम्बई का फोटो पत्रकार सामूहिक बलात्कार केस, पटना आशियाना नगर मुठभेड केस, त्रिवेणी बेन बनाम गुजरात राज्य, महात्मा गाँधी हत्या केस तथा पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गाँधी हत्या केस और प्रमुख हैं।

समय–समय पर 1949 से 1982 तक संसद के माननीय सांसदों और विधिक राष्ट्रीय संगोष्ठी तथा दंड विधि पर आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय कांग्रेस के सम्मेलनों में प्रस्तुत मृत्युदण्ड की समाप्ति पर आये प्रस्ताव जिन्होंने निश्चित रूप से उच्चतम न्यायालय के "विरल से विरलतम" सिद्धान्त को बल प्रदान किया भी सम्मिलित किये गये हैं। यही नहीं एमनेस्टी इण्टरनेशनल तथा मानव अधिकार संगठन द्वारा लगातार अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मृत्युदण्ड समाप्ति पर अब तक के प्रयासों से "विरल से विरलतम" सिद्धान्त को मिले बल को भी यथा स्थान दिया गया है। इसके साथ–साथ उन मामलों को भी जिनको सी0बी0आई0 तथा प्रथम न्यायालय द्वारा "विरल से विरलतम" माना गया किन्तु माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा उन्हें "विरल से विरलतम" नहीं माना गया परिणामतः ऐसे अभियुक्तों को मृत्युदण्ड का वैकल्पिक दण्ड आजीवन कारावास ही दिया गया। उपरोक्त वादों में कुछ ऐसे महत्वपूर्ण वाद भी प्रस्तुत लेख में सम्मिलित किये गये हैं जिनको "विरल से विरलतम" श्रेणी में रखे जाने पर मृत्युदण्ड दिये जाने को अप्रासंगिक मानते हुए मृत्युदण्ड के स्थान पर संशोधन कर आजीवन कारावास दिया गया जो "विरल से विरलतम सिद्धान्त की प्रासंगिकता" को सिद्ध करता है। प्रस्तुत लेख में वर्णित कुछ चयनित महत्वपूर्ण वादों में मृत्युदण्ड दिया जाना अथवा नहीं दिया जाना अथवा मृत्युदण्ड संशोधित कर आजीवन कारावास दिया जाना उच्चतम न्यायालय के "विरल से विरलतम" सिद्धान्त के औचित्य को सिद्ध करता है।उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रतिपादित "विरल से विरलतम" सिद्धान्त की गंभीरता विभिन्न वादों में इस सिद्धान्त की प्रासंगिकता, औचित्य, और विधिक प्रभाव छोड़ते हुए यह भी सिद्ध करती है कि उच्चतम न्यायालय को "विरल से विरलतम" सिद्धान्त मृत्युदण्ड की गैरवापसीय गंभीरतम स्थिति की परिणति है।

मुख्य शब्द : मृत्युदण्ड, विरल से विरलतम सिद्धान्त।

प्रस्तावना

मृत्युदण्ड के लिए घोषित अपराधों में देशद्रोह और सैनिक विद्रोह को छोड़कर राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के अन्य अपराध सामान्यतः घटित होते रहते हैं इन सामान्यतः घटित होने वाले अपराधों में संयुक्त अपराधियों पर अन्य

अपराध भले ही बनते हों, जैसे हत्या के लिये स्थितियाँ उत्पन्न करना या आत्महत्या के लिये उकसाना अथवा हत्या में सम्मिलित होना आदि। प्रस्तुत लेख में इसी प्रकृति के अपराध भी लिये गये हैं।

कुछ केस सी0बी0आई0 अथवा सम्बन्धित न्यायालय द्वारा "विरल से विरलतम" श्रेणी में भले ही न माने गये हों लेकिन उनमें मृत्युदण्ड दिये जाने का प्रमुख कारण, परिस्थितियाँ, अपराध का तरीका, तथा विलम्ब आदि विद्यमान होने के चलते वे उच्चतम न्यायालय के "विरल से विरलतम" सिद्धान्त का ध्यान रखते हुए ही सुनिश्चित किये गये उन्हें भी प्रस्तुत लेख में सम्मिलित किया गया है।

अध्ययन का उद्देश्य

"विरल से विरलतम" सिद्धान्त का मुख्य उद्देश्य यही है कि दूषित पहचान, दूषित साक्ष्य, अपर्याप्त स्थितिजन्य साक्ष्य, अविश्वनीय विशेषज्ञ साक्ष्य तथा मृत्युदण्ड में अभियुक्त को अति विलम्ब के चलते फाँसी देकर उसकी जीवन इहलीला समाप्त न की जा सके बल्कि अभियुक्त की पुष्ट पहचान और पर्याप्त ठोस स्थितिजन्य साक्ष्य और विश्वसनीय विशेषज्ञ साक्ष्य ही मृत्युदण्ड दिये जाने के प्रमुख आधार बन सकें यह बताना लेख के माध्यम से महत्वपूर्ण एवं आवश्यक है। यही नहीं "विरल से विरलतम" सिद्धान्त उच्चतम न्यायालय का एक महत्वपूर्ण कारण कि मृत्युदण्ड यदि किसी अभियुक्त को दिया जाता है और बाद में केस की खामियाँ, कमजोरियाँ अथवा सत्यता प्रमाणित होने पर उसे संशोधित और परिवर्तित करना पड़े तो चूंकि मृत्युदण्ड अपने आप में दिये जाने के पश्चात् पश्चाताप कर लेने पर भी गैरवापसीय बना रहने के कारण वापसीय स्थिति में नहीं रहता क्योंकि तब तक जिसके लिए दिया गया मृत्युदण्ड वापस लेना है वह अभियुक्त मृत्युदण्ड प्राप्त कर मर चुका होता है। यही महत्वपूर्ण कारण उच्चतम न्यायालय द्वारा "विरल से विरलतम" सिद्धान्त प्रतिपादित करने का रहा जिससे अभियुक्त मिलने वाले न्याय के स्थान पर अन्याय का शिकार न हो जाये। स्पष्ट है कि मृत्युदण्ड न्याय का पर्याय नहीं हो सकता, क्योंकि दण्ड का मुख्य उद्देश्य अपराधी का "सुधार और पुनर्वास" करना होता है। मृत्युदण्ड इसका समर्थन नहीं करता। उच्चतम न्यायालय द्वारा "विरल से विरलतम" सिद्धान्त का प्रतिपादन करने से जिन महत्वपूर्ण बिन्दुओं को ध्यान में रखा है वे हैं (1) अपराध की गम्भीरता, (2) अपराध किन परिस्थितियों में किया गया, (3) अपराधी द्वारा अपराध किये जाने का तरीका और (4) अपराधी का पूर्व अथवा पृष्ठ भूमि इतिहास ताकि यह समझा जा सके कि यदि उसे मृत्युदण्ड न दिया गया तो उसके जीवित रहने से समाज को क्या संभावित खतरा उत्पन्न होने की संभावना है। उपरोक्त बिन्दु ही "विरल से विरलतम" सिद्धान्त को औचित्यपूर्ण, प्रभावी और प्रासंगिक बनाते हैं।

यही नहीं कुछ महत्वपूर्ण वादों को "विरल से विरलतम" श्रेणी में रखे जाने पर भी उच्चतम न्यायालय द्वारा अप्रासंगिक मानते हुए मृत्युदण्ड के स्थान पर संशोधित दण्ड, आजीवन कारावास ही दिया जाना "विरल से विरलतम" सिद्धान्त की प्रासंगिकता को सिद्ध करता है। यह सिद्ध करना भी प्रस्तुत लेख का प्रमुख उद्देश्य है। किसी भी वाद विशेष में मृत्युदण्ड दिया जाना अथवा नहीं दिया जाना अथवा मृत्युदण्ड संशोधित कर आजीवन कारावास दिया जाना उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त के औचित्य को बताना भी प्रस्तुत लेख का मुख्य उद्देश्य है।

उच्चतम न्यायालय के "विरल से विरलतम" सिद्धान्त की आवश्यकता का औचित्य

पर्याप्त ठोस स्थितिजन्य साक्ष्य, विश्वसनीय विशेषज्ञ साक्ष्य तथा अभियुक्त की पुष्ट पहचान के अभाव में 1983 में अमेरिका के कार्लोस डेलुना को दिया गया मृत्युदण्ड, दण्ड की गैरवापसीय स्थिति को प्रमाणित करता है जो "विरल से विरलतम" सिद्धान्त की "आवश्यकता का औचित्य" सिद्ध करता है। यह सिद्ध कर बताना भी लेख का अति महत्वपूर्ण उद्देश्य रहा है ताकि संवैधानिक, विधिक तथा दांडिक क्षेत्र में इस तथ्य को व्यापक स्तर पर समझा जा सके। डेलुना केस में मृत्युदण्ड की गैरवापसीय स्थिति तब उत्पन्न हुई जब कोलम्बिया विश्वविद्यालय के कानून विभाग के अध्ययन से मृत्युदण्ड के पश्चात् यह तथ्य सामने आया कि जिस नौजवान महिला वाण्डा लॉपेज की हत्या का दोषी कार्लोस डेलुना माना गया था उसका वास्तविक हत्यारा उसके शारीरिक गठन से मिलता जुलता एक अन्य व्यक्ति कार्लोस हर्नादेज था। क्योंकि दूषित साक्ष्य, अपर्याप्त स्थितिजन्य साक्ष्य, अविश्वसनीय विशेषज्ञ साक्ष्य तथा दूषित पहचान के चलते कार्लोस डेलुना को मृत्युदण्ड दिया गया।

"विरल से विरलतम" सिद्धान्त के प्रतिपादित होने के कारण

उच्चतम न्यायालय द्वारा "विरल से विरलतम" सिद्धान्त को प्रतिपादित करने का मुख्य कारण अपराध की गंभीरता, स्थितिजन्य परिस्थितियाँ, अपराधी की पृष्ठभूमि तथा अपराधी से भविष्य में समाज को होने वाला संभावित खतरा है। इन बिन्दुओं के निष्कर्ष तक पहुँचने के लिए अपराधी के सम्बन्ध में पुष्ट पहचान, पुष्ट साक्ष्य, पर्याप्त स्थितिजन्य साक्ष्य, विश्वसनीय विशेषज्ञ साक्ष्य ही अपराध को "विरल से विरलतम" श्रेणी में लाते हैं। चूंकि न्यायिक व्यवस्था में अपराधी के अपराध को सिद्ध करने की छानबीन की न्यायिक प्रक्रिया में बहुत खामियाँ और कमियाँ रह जाती हैं। इन कमियों और खामियों के रहने के महत्वपूर्ण कारण, दूषित पहचान, दूषित साक्ष्य, अपर्याप्त स्थितिजन्य साक्ष्य, अविश्वसनीय विशेषज्ञ साक्ष्य होते हैं जिनके कारण अपराधी के अपराध को "विरल से विरलतम" श्रेणी में रखना असंभव होता है। अतः इन बिन्दुओं पर ही जाँच संवेदनशीलता के साथ होना आवश्यक होता है, उपरोक्त किसी एक बिन्दु के उपस्थित रहते हुए भी यदि मृत्युदण्ड दे दिया जाता है और उसके पश्चात् अपराध की "विरल से विरलतम" श्रेणी प्रमाणित नहीं होती है तो ऐसे में दिया गया मृत्युदण्ड जो नितान्त गैरवापसीय है उसे वापसीय स्थिति में कदाचित नहीं लाया जा सकता अर्थात् एक निर्दोष जिसको मात्र आजीवन कारावास अथवा अन्य कोई दण्ड ही दिया जा सकता था किन्तु महत्त्वूपर्ण जाँच बिन्दुओं की कमी में मृत्युदण्ड दे दिया गया। इस संवेदनशील विधिक तथ्य के कारण को

ही ध्यान में रखते हुए और संवेदनशीलता अपनाते हुए माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा "विरल से विरलतम" सिद्धान्त प्रतिपादित किया गया है जिससे अभियुक्त के प्रति न्याय के सिवाय कोई अन्याय की स्थिति उपस्थित न हो सके। "दूषित साक्ष्य, अपर्याप्त स्थितिजन्य साक्ष्य, अविश्वसनीय विशेषज्ञ साक्ष्य दूषित पहचान के चलते ही 1983 में अमेरिका के कार्लोस डेलुना को गैरवापसीय दण्ड अर्थात् मृत्युदण्ड दे दिया गया था जो विधि विशेषज्ञों को निरन्तर सचेत किये रहता है।

अपराध की गम्भीरता, अपराधी का पूर्व इतिहास, अपराध की घटित होने की स्थितियाँ, अपराध का तरीका, भविष्य में समाज को अपराधी से सम्भावित खतरा आदि बिन्दु मृत्युदण्ड की संवैधानिकता को दाण्डिक विधि की ओर ले जाते हैं। अपराध की यह स्थिति ही "विरल से विरलतम" सिद्धान्त की प्रासंगिकता, औचित्य, और विधिक प्रभाव को दांडिक तथा संवैधानिक क्षेत्र में सिद्ध करती है।

बिना ठोस प्रमाणिकता के "विरल से विरलतम" सिद्धान्त किसी केस को "विरल से विरलतम" श्रेणी की प्रमाणिकता प्रदान नहीं करता। लेख में यह तथ्य भी प्रमुखता से समझने की आवश्यकता समझी गई।

एमनेस्टी इंटरनेशनल और मानव अधिकारों की मुहिम के चलते "विरल से विरलतम" सिद्धान्त को उच्च स्तरीय दाण्डिक, न्यायिक, विधिक, एवं संवैधानिक उद्देश्यपरक प्रमाणिकता मिलती है। पूर्व मुख्य न्यायाधीश पी0 सदाशिवम, जाने माने अधिवक्ता प्रशान्त भूषण, न्यायमूर्ति राजेन्द्र सच्चर, पूर्व न्यायामूर्ति व पूर्व उपराष्ट्रपति हिदायतुल्ला द्वारा समय–समय पर प्रस्तुत किये गये संवैधानिक, न्यायिक तथा दाण्डिक विचार "विरल से विरलतम" सिद्धान्त की पुष्टता को सबल एवं और अधिक प्रासंगिक बनाते हैं।

"विरल से विरलतम" सिद्धान्त को पुष्ट करते कुछ महत्वपूर्ण मार्गदर्शक केस

प्रस्तुत लेख में कुछ मामलों को भी महत्वपूर्ण दृष्टांत तथा मार्गदर्शक के रूप में सम्मिलित किया गया है जिन्हें "विरल से विरलतम" माने जाने के कारण ही मृत्युदण्ड दिया गया। मुख्य रूप से इस प्रकृति के महत्वपूर्ण वादों में सर्वेश्वर प्रसाद शर्मा बनाम मध्य प्रदेश 1977 4 एस0सी0सी0 322 के वाद में अभियुक्त ने मौद्रिक अधिलाभ से प्रेरित होकर अपने घनिष्ठ मित्र के 60 वर्षीय वृद्ध माता–पिता, 25 वर्ष की पत्नी, 16, 13, 8, 5 और 3 वर्ष तक के और स्वयं अभियुक्त का मित्र इस हत्याकाण्ड का शिकार हुए थे। विचारण न्यायालय ने अभियुक्त को मृत्युदण्ड प्रदान करते हुए यह दृष्टिकोण व्यक्त किया था कि "पशु भी अकृत्यज्ञता का प्रदर्शन नहीं करते परन्तु यह मामला तो जघन्य अकृत्यज्ञता का ज्वलंत उदाहरण है। 9 व्यक्तियों और उनमें अल्पायु बच्चों की हत्या करना वह भी एक से अधिक चोटें पहुंचाकर जो प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त हैं। अपराध की सीमा को चरम तक पहुँचा देती है इस तरह की स्थिति में यही कहना प्रासंगिक होगा कि अभियुक्त का कार्य न केवल पशुता से परिपूर्ण है वरन् लालच से युक्त राक्षसी कृत्य भी है। अपराध की गंभीरता को कम करने वाली परिस्थितियों के अभाव में अभियुक्त को मृत्युदण्ड देना ही उपयुक्त है। इस वाद में चूंकि विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय ने दिये गये मत्युदण्ड के आदेश में पर्याप्त औचित्य स्थापित किया था जिसमें मामले को "विरल से विरलतम" बनाया। अतः उच्चतम न्यायालय में अभियुक्त की अपील अस्वीकार कर दी गई। इसी प्रकार धनजंय चटर्जी उर्फ धन्ना बनाम पश्चिम बंगाल राज्य ए0आई0आर0 2004 सुप्रीम कोर्ट के मामले में अभियुक्त धनजंय ने एक स्कूली छात्रा हेतल पारेख का बलात्कार करके उसकी निमर्म हत्या कर दी थी। अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता की धारा 302/376/380 के अन्तर्गत सिद्ध दोष कर मृत्युदण्ड दिया गया। उच्चतम न्यायालय ने अभियुक्त की अपील को खारिज कर उसके मामले को "विरल से विरलतम" मानते हुए मृत्युदण्ड को उचित माना। इसी प्रकार 28 दिसम्बर 2002 को पटना के शास्त्रीनगर थाने के आशियाना नगर स्थित सम्मेलन मार्केट में सांय 4 बजे घटित केस में हार्डवेयर इंजीनियरिंग के छात्र विकास रंजन यादव, प्रशान्त सिंह (आर0पी0एस0 कॉलेज), हिमांशु यादव, जाकिर हुसैन संस्थान के बी0एस–सी0 प्रथम के छात्र को पुलिस द्वारा फर्जी मुठभेड में मार गिराया। पूर्व में ही पटना के तदर्थ अपर न्यायाधीश रवि शंकर सिन्हा द्वारा मामले को "विरल से विरलतम" मानते हुए 12 वर्ष पश्चात् 24 जून 2014 को आरोपित दरोगा शम्से आलम सहित 7 सिपाहियों को धारा 302/149 के तहत फाँसी, 148 के तहत 3 वर्ष कैद, 342 के तहत एक वर्ष कैद, 201 के तहत 7 वर्ष और 10 हजार रूपये प्रति मृतक जुर्माना और आर्म्स एक्ट के तहत 7 वर्ष कैद और 10,000/–(प्रति मृतक) की सजा, सिपाही अरूण कुमार सिंह को धारा 149 के तहत ताउम्र सश्रम कारावास और 10,000/(प्रति मृतक), 342 के तहत एक वर्ष कैद, 201 के 3 वर्ष कैद व 10,000/–(प्रति मृतक) की सजा अन्य दोषी – दुकानदार कमलेश गौतम, राजीव रंजन, सोनी, रजत, कुमुद कुमार, राकेश मिश्रा व अनिल कुमार को धारा 307/149 के तहत ताउम्र साश्रम करावास व 10,000–10,000/– (प्रति मृतक) जुर्माना और धारा 301 के तहत 3 वर्ष कैद और 5,000–5000/– (प्रति मृतक) अर्थ दण्ड की सजा दी गई।

माझी सिंह बनाम पंजाब राज्य 1983 क्रि0लॉ0 जे0 1457 के मामले में दो निर्दोष महिलाओं की हत्या करने वाले अभियुक्त को उसके द्वारा हत्यायें बर्बतापूर्ण तथा निमर्म ढंग से किये जाने को आधार मानते हुए मृत्युदण्ड दिया जाना उचित समझा। [1]

अशर्फीलाल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य ए0 आई0 आर0 1987 सुप्रीम कोर्ट 1727 के मामले में अपीलार्थी ने 14 अगस्त 1984 को एक महिला से सम्पत्ति सम्बन्धित किसी झगड़े के कारण बदले की भावना से उस महिला तथा दो अबोध बालिकाओं की हत्या कर दी। अपील को खारिज करते हुए उच्चतम न्यायालय ने विनिश्चय किया कि ऐसी जानबूझकर की गई निदर्ययतापूर्वक हत्या करने के कारण को आधार मानकर अभियुक्त को प्रतिरोधात्मक दंड के रूप में मृत्युदण्ड देना न्यायालय का कर्तव्य है।

"विरल से विरलतम" सिद्धान्त को पुष्ट करती धारा 376(ई) मुम्बई का फोटो पत्रकार गैंग रेप केस –

सामूहिक बलात्कार की संशोधित धारा 376 (ई) में मृत्युदण्ड

सत्र न्यायाधीश शालिनी फंसाल्कर जोशी ने मुम्बई की शक्ति मिल में फोटो पत्रकार से गैंग रेप के तीन दोषियों को 4 अप्रैल 2014 को 16 दिसम्बर 2012 के दिल्ली के निर्भया सामूहिक बलात्कार मामले के बाद अस्तित्व में आई बलात्कार की संशोधित धारा 376 (ई) जो सामूहिक बलात्कार में सजा भुगत रहे अभियुक्तों द्वारा पुनः सामूहिक बलात्कार करने के अपराध में मृत्युदण्ड का प्रावधान करती है में स्थानीय सत्र अदालत ने सजाये मौत दी। [2]

1. कासिम बंगाली
2. मोहम्मद सलीम अंसारी
3. विजय जाघव।

सभी फांसी की सजा पाये तीनों दोषी शक्ति मिल परिसर में एक टेलीफोन आरपरेटर से भी गैंगरेप के दोषी होने के कारण उम्र कैद की सजा काट रहे थे। इन आरोपियों ने फोटो पत्रकार से भी सामूहिक दुष्कर्म किया था। सामूहिक बलात्कार की संशोधित धारा 376 (ई) के तहत फैसला सुनाया गया। यह संशोधित धारा दिल्ली के निर्भय रेप केस के बाद लागू की गई थी।

4 गवाह 600 पन्नों की चार्जशीट

पुलिस ने 44 लोगों की गवाही ली जबकि 600 पन्नों की चार्जशीट दाखिल की गई वहीं टेलीफोन आपरेटर से सामूहिक बलात्कार केस में 31 लोगों की गवाही हुई और 361 पन्नों की चार्जशीट दाखिल की गई। मुम्बई गैंगरेप की सुनवाई काफी तेजी से घटना के 225 दिनों के भीतर हुई जिसके तहत न्यायधीश ने फांसी की सजा सुनाई और तीनों दोषियों की सुधार की कोई गुंजाइश नहीं थी ऐसे में इन्हें फांसी की सजा से कम सजा नहीं दी जा सकती थी यह भी स्पष्ट किया।

फांसी की सजा सुनाये जाने के 10 कारण – न्यायाधीश द्वारा फांसी की सजा सुनाये जाने के दस कारण बताये गये –

1. सामूहिक दुष्कर्म का यह मामला सुनियोजित था,
2. दोषियों ने पीड़िता का बेचारगी होने का फायदा उठाया,
3. सामूहिक दुष्कर्म को भयानक अंजाम दिया,
4. दुष्कर्म कर्ताओं द्वारा हमदर्दी या मानवता नहीं दिखाई,
5. दोषियों द्वारा अपराधिक साजिश का अनुसरण,
6. दोषियों द्वारा कानून के प्रति कोई सम्मान नहीं दिखाई दिया
7. दोषियों में सुधार की संभावना नहीं,
8. दोषी सेक्स के भूखे गुंडे हैं
9. सामूहिक बलात्कार होशो–हवाश में किया गया,
10. ऐसी घृणित सोच रखने वालों को यह (मृत्युदण्ड) सबसे कठोर संदेश।

"विरल से विरलतम" सिद्धान्त की पुष्टि करता दिल्ली का निर्भया गैंगरेप केस

निर्भया गैंगरेप के दोषियों को सजाए मौत

16 दिसम्बर 2012 को घटित निर्भया सामूहिक दुष्कर्म और हत्याकाण्ड के चारों दोषियों की फांसी की सजा को दिल्ली हाईकोर्ट ने बरकरार रखते हुए 13–3–2014 को दोषियों की अपील खारिज करते हुए कि देश में महिलाओं के खिलाफ बढ़ते हुए अपराध, खासकर दुष्कर्म के मामले बढ़े हैं।[3] ऐसे में इन आरोपियों पर नरमी नहीं बरती जा सकती। इससे समाज में गलत संदेश जायेगा।

जस्टिस प्रतिभा रानी रेवा खेत्रपाल की पीठ ने कहा "इन आरोपियों पर नरमी बरतने का कोई सवाल ही नहीं है। नरमी बरते जाने पर ऐसे अपराधियों को लगेगा कि वे इस तरह के जघन्य, अमानवीय और बर्बरतापूर्ण अपराध को अंजाम देने के बाद भी बच सकते हैं।" पीठ ने पुलिस की ओर से विशेष अभियोजक दयान कृष्णन की दलीलों को स्वीकार करते हुए यह टिप्पणी की। दलीलों में कहा गया था कि देश खासकर दिल्ली, मुम्बई जैसे महानगरों में दुष्कर्म मामलों में तेजी से बढ़ोत्तरी हुई है। ऐसे में दोषियों के प्रति किसी भी प्रकार की नरमी से लोगों के बीच गलत संदेश जायेगा। पीठ ने विनय, मुकेश, पवन कुमार और अक्षय ठाकुर को फास्ट कोर्ट द्वारा 13 सितम्बर 2013 को दी गई फांसी की सजा बरकरार रखी। हाईकोर्ट ने अपना फैसला 340 पन्नों में लिखा और 34 दिनों तक हाईकोर्ट में सुनवाई चली। जबकि फास्ट ट्रेक का फैसला 1260 पन्नों में था।

उपर्युक्त न्यायिक निर्णयों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि मृत्युदण्ड पूर्णतः संवैधानिक है क्योंकि इस तरह का दण्ड अति दुरूह परिस्थिति में विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार दिया जाता है जो उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रतिपादित "विरल से विरलतम" सिद्धान्त को पुष्ट करता है।

प्रस्तुत लेख में "विरल से विरलतम" के आधार बिन्दु क्रमवार लेकर उन पर चर्चा की गयी है जिनमें प्रथम पर मृत्युदण्ड पर गैरवापसीय स्थिति महत्वपूर्ण रूप से रखी गयी है। इस संदर्भ में अमेरिका के कार्लोस डेलुना केस को महत्वपूर्ण एवं अद्वितीय दृष्टान्त वाद मानते हुए रखा गया है जिसमें 1983 में डेलुना जब 20 वर्ष का था तब उसे वांडा लोपेज नाम की नौजवान महिला की हत्या के आरोप में अमेरिका के टेक्सास राज्य में गिरफ्तार किया गया। अदालत ने दूषित पहचान, दूषित साक्ष्य, अपर्याप्त स्थितिजन्य साक्ष्य और अविश्वसनीय विशेषज्ञ साक्ष्य के चलते भी दोषी माना। अतः यहाँ मृत्युदण्ड की गैरवापिसीय स्थिति ने उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रतिपादित "विरल से विरलतम" सिद्धान्त को बल प्रदान किया जो घटनाक्रम की पुष्टि कर सिद्धान्त को औचित्य की ओर ले जाता है। उसे दोषी माना और मृत्युदण्ड सुना दिया। मुकदमे के दौरान डेलुना और उसके अधिवक्ता कोर्ट को बताते रहे कि लोपेज की हत्या उसने नहीं बल्कि उससे मिलते–जुलते शारीरिक गठन वाले कार्लोस हर्नादेज नाम के व्यक्ति ने की है। मगर उनकी दलीलें ठकुरा दी गई। बाद में कोलम्बिया विश्वविद्यालय के कानून विभाग के अध्ययन से

यह सामने आया कि डेलुना सच बोल रहा था। यानि उसे दी गई मृत्युदण्ड की सजा गलत थी किन्तु अब कुछ नहीं हो सकता है क्योंकि डेलुना मर चुका है अतः उसे दिया गया मृत्युदण्ड गैरवापसीय दण्ड बन चुका।

प्रस्तुत लेख में कुछ ऐसे मामले भी लिये गये हैं जिनमें उच्चतम न्यायालय द्वारा "विरल से विरलतम" सिद्धान्त का निरस्तीकरण उद्घोषित कर भले ही नहीं किया हो लेकिन क्रियान्वयन में "विरल से विरलतम" पक्षधरों को निरस्त कर मृत्युदण्ड को नकारा है। मगन लाल जैसा महत्वपूर्ण केस जिसमें कि उसके मृत्युदण्ड को निचली अदालत से लेकर उच्चतम अदालत तक बरकरार रखने के पश्चात् दया याचिका तक निरस्त कर निस्तारित कर दिया गया था और फाँसी के लिये लखनऊ से जल्लाद बुलाकर फाँसी दिये जाने का पूर्वाभ्यास भी करा दिया गया था लेकिन फांसी से पूर्व 7 अगस्त 2013 की रात्रि 11 बजे कुछ प्रगतिशील अधिवक्ताओं सर्वश्री युग चौधरी, ऋषभ संचेती, गोंजालिब्स, सिद्धार्थ द्वारा स्थगन आदेश लिया जाना अपने आप में इस को अभूतपूर्व प्रकृति का बनाता है इसे प्रस्तुत लेख में सम्मिलित कर स्थान दिया गया है।

पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गाँधी हत्या केस में भी फाँसी की तिथि 9 सितम्बर 2011 घोषित हो गयी थी लेकिन केस को "विरलम से विरलतम" होने पर भी अपराधियों को मृत्युदण्ड दिये जाने की 11 वर्ष के अति विलम्ब को अपराधियों के लिये घोर प्रताड़ना तथा मानसिक वेदना की अवधि माना गया। यहाँ तक कि मुख्य न्यायाधीश पी0 सदाशिवम् द्वारा अपराधियों के लिये इस 11 वर्ष के अति विलम्ब की अवधि अभियुक्तों द्वारा राष्ट्रपति की दया याचिका में उनके द्वारा प्रताड़ना तथा मानसिक वेदना बताने को आधार माना गया जिसमें उन्होंने अपने जीवन को 'चलती–फिरती लाशें' करार दिया था जो भविष्य के लिए नजीर है। केस के महत्वपूर्ण वृतान्त घटनाक्रम के रूप में तिथिवार प्रस्तुत किये गये हैं। "विरल से विरलतम" सिद्धान्त को प्रभावित करते राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर से आच्छादित कुछ अतिमहत्वपूर्ण केस –

महात्मा गाँधी हत्या केस (सारांश) (हत्या 30 जनवरी 1948, मृत्युदण्ड 15 नवम्बर 1949)[4]

1. नाथूराम गोडसे मृत्युदण्ड, अन्य दण्ड जोड़ 19 वर्ष, 2. नाना आप्टे मृत्युदण्ड, अन्य दण्ड जोड़ 17 वर्ष, 3. करकरे आजन्म कारावास, अन्य दण्ड जोड़ 17 वर्ष, 4. मदन लाल आजन्म कारावास, अन्य दण्ड जोड़ 15 वर्ष, 5. शंकर किस्तैया आजन्म कारावास, अन्य दण्ड जोड़ 12 वर्ष, 6. गोपाल गोडसे आजन्म कारावास, अन्य दण्ड जोड़ 15 वर्ष, 7. डॉ0 परचुरे आजन्म कारावास, 8. सावरकर निर्दोष, अतएव बन्धन मुक्त, 9. बड़गे क्षमा का साक्षी, अपेक्षाओं की पूर्ति, अतः बन्धन मुक्त।

दण्डितों को दिया गया दण्ड। उस समय सभी दण्ड साथ–साथ भुगतने का विधान था। जो आरोप लगाये गये थे उनमें से कुछ आरोप सिद्ध नहीं हो पाये थे। नाथुराम गोडसे और नाना आप्टे को न्यायमूर्ति ने कहा था कि अन्य आरोपों से आप लोगों को मुक्त किया जाता है। इसी प्रकार अन्य अभियुक्तों को भी जो आरोप उन पर सिद्ध नहीं हुए थे उनसे मुक्त किया गया था।

शंकर किस्तैया के विषय में न्यायाधीश का अभिमत – शंकर किस्तैया का दण्ड 7 वर्ष कर दिया जाये ऐसा अभिमत न्यायाधीश ने अपने निर्णय अभिपत्र में किया था। अभिपत्र 204 पृष्ठों में टाईप हुआ था, मुद्रित होने पर उसके 110 पृष्ठ बने।

दिनांक 15–11–1949 को प्रातःकाल 8 बजे यथाविधि नाथूराम गोडसे और नाने आप्टे को फाँसी दी गई। हमने देखा "विरल से विरलतम" घोषित न किये जाने पर भी महात्मा गाँधी हत्या केस "विरल से विरलतम" सिद्धान्त से अछूता नहीं रहा।

"विरल से विरलतम" सिद्धान्त को प्रभावित करता राजीव गाँधी हत्या केस (21 मई 1991)[5]

1998 – टाडा कोर्ट से अभियुक्तों को फांसी, 1999 – सुप्रीम कोर्ट ने अभियुक्तों की फाँसी की सजा की पुष्टि की, 2000 – राज्यपाल ने दया याचिका खारिज की, केन्द्र के पास गई, 2005 – दया याचिका राष्ट्रपति को प्रेषित, 2011 – दया याचिका राष्ट्रपति द्वारा खारिज।

उच्चतम न्यायालय ने उम्र कैद में बदली अभियुक्तों की सजा – सुप्रीम कोर्ट ने तीनों दोषियों की दया याचिका निपटारे की देरी को बनाया आधार – सुप्रीम कोर्ट ने 18 फरवरी 1999 मंगलवार को राजीव गाँधी हत्याकाण्ड के तीन दोषियों की फाँसी की सजा उम्र कैद में बदल दी। दयायाचिका में हुई 11 साल की देरी को दोषियों की सजा माफ करने का आधार बनाया। कोर्ट ने इसे अत्यधिक विलम्ब तो माना ही घोर प्रताड़ना तथा मानसिक वेदना भी। फैसला सुनाते हुए शीर्ष अदालत ने विरोध कर रही केन्द्र सरकार के तमाम तर्कों को भी खारिज कर दिया। मुख्य न्यायाधीश जस्टिस पी0 सदाशिवम, रंजन गगोई और शिव कीर्ति सिंह की तीन सदस्यीय पीठ ने यह फैसला सुनाया। कोर्ट ने कहा दोषियों के "राष्ट्रपति के लिखे पत्रों में मानसिक वेदना साफ झलकती है। उन्होंने लिखा है कि वे चलती–फरती लाशें हैं।" हालांकि केन्द सरकार का तर्क था कि दोषियों की दया याचिकाओं के निपटारे में अनुचित विलम्ब नहीं हुआ है उन्हें मानसिक वेदना से नहीं गुजरना पड़ा।

21 जनवरी का फैसला बना आधार

कोर्ट ने 21 जनवरी को फैसला दिया था जिसमें कहा गया था कि दया याचिकाओं के निपटारे में विलम्ब मौत की सजा को उम्र कैद में तबदील करने का आधार हो सकता है। यदि कैदी मानसिक रूप से बीमार है तो उसे फाँसी नहीं हो सकती। इसके साथ ही पीठ ने 15 कैदियों की सजा उम्र कैद में बदल दी थी।

रिहाई का रास्ता साफ

सुप्रीम कोर्ट ने स्पष्ट किया कि उम्र कैद का मतलब ताउम्र कैद होगी। बावजूद इसके सरकार चाहे तो उनकी सजा माफ कर सकती है। लेकिन इस दौरान संतुलन के नियमों को ध्यान में रखा जाये।

केस में उच्चतम न्यायालय की सिफारिश

1. दया याचिका निपटाने के लिए राष्ट्रपति को मुनासिब सलाह दे, 2. सरकार व्यवस्थित तरीकों से दया याचिकाओं को निपटाये, 3. फाँसी में देरी के मुद्दे को भी

मापदंड बना देना चाहिए। चेन्नई की टाडा कोर्ट में हुई मामले की सुनवाई। 28 जनवरी 1998 को टाडा कोर्ट में राजीव गाँधी हत्याकाण्ड के सभी 26 आरोपियों को फाँसी की सजा सुनाई। 11 मई 1999 को सुप्रीम कोर्ट ने चार दोषियों (पैरारिवलन, संथन, मुरूगन, नलिनि) की फाँसी कायम रखी, 3 को उम्र कैद की सजा और 19 को बरी किया। 2000 में सुप्रीम कोर्ट ने सोनिया गाँधी की अपील पर उम्र कैद में बदली नलिनि की सजा, उसकी बच्ची को माना आधार। अगस्त 2011 में राष्ट्रपति प्रतिभा पाटिल ने पररिवलन, संथन और मुरूगन की दया याचिका खारिज की। 9 सितम्बर 2011 को दी जानी थी फाँसी। 21 मई 1991 को लोकसभा चुनाव के लिए प्रचार करने के दौरान जनसभा के मंच की ओर बढ़ते हुए रात्रि 10.21 बजे धनु नाम की लिट्टे की आत्मघाती हमलावर ने पैर छूते ही विस्फोटकों की बेल्ट से धमाका कर दिया जिसमें राजीव गाँधी और धनु सहित 17 लोगों की मौत हुई थी, स्थानीय फोटोग्राफर के कैमरे से आरोपियों की पहचान हुई थी।

"विरल से विरलतम" माना गया पटना का आशियाना नगर मुठभेड केस – 12 साल बाद दरोगा को मृत्युदण्ड सात को उम्रकैद – तिथिवार घटनाक्रम[6]

28 दिसम्बर 2002 को पुलिस अधिकारी ने उत्तेजित भीड़ द्वारा हत्या करने की प्राथमिकी दर्ज कराई, 29 दिसम्बर 2002 को एस0एस0पी0 के निर्देश पर हत्या की प्राथमिकी दर्ज, 18 फरवरी 2003 को सी0बी0आई0 ने केस दर्ज किया, 29 मार्च 2003 को सी0बी0आई0 ने दरोगा समेत 8 के खिलाफ चार्जशीट दााखिल की, 5 जून 2014 को सभी आरोपी दोषी करार, 24 जून 2014 को आरोपित दरोगा और सिपाही समेत 8 को सजा।

सजा – दरोगा शम्से आलम

भारतीय दंड विधान की धारा 302/149 के तहत फाँसी, 148 के तहत 3 वर्ष कैद, 342 के तहत एक वर्ष कैद, 201 के तहत 7 वर्ष कैद और 10,000/– प्रति मृतक और आर्म्स एक्ट के तहत 7 वर्ष कैद और 10,000/– (प्रति मृतक) की सजा।

सिपाही अरूण कुमार सिंह – भा0द0वि0 की धारा 149 के तहत ताउम्र साश्रम कारावास और 10,000/– रूपये (प्रति मृतक) 148 के तहत तीन वर्ष कैद, 342 के तहत एक वर्ष कैद, 201 के तहत 3 वर्ष कैद व 10,000/– (प्रति मृतक) की सजा।

अन्य दोषी – दुकानदार कमलेश गौतम, राजीव रंजन, सोनी, रजत, कुमुद कुमार, राकेश मिश्रा व अनिल कुमार को धारा 307/149 के तहत ताउम्र सश्रम कारावास व 10,000/– 10,000/– (प्रति मृतक) जुर्माना और धारा 201 के तहत तीन वर्ष कैद और 5,000/– 5,000/– (प्रति मृतक) अर्थ दण्ड की सजा।

दरोगा शम्से आलम ने 3 छात्रों की अपनी रिवाल्वर से नजदीक से गोली मारकर हत्या कर दी। दरोगा ने इस घटना को निजी और इनाम पाने के लालच में अंजाम दिया। दरोगा उन छात्रों को इलाज के लिये अस्पताल नहीं ले गया।

तदर्थ अपर जिला एवं सत्र न्यायधीश रवि शंकर सिन्हा ने फर्जी मुठभेड काण्ड में अपना फैसला देते हुए यह टिप्पणी कि दरोगा ने फर्जी तरीके से छात्रों को पास से गोली से दो देसी पिस्तौल और एक गोली की बरामदगी दिखा दी। दरोगा के निर्देश पर क्रास के मोबाईल के सिपाही अरूण कुमार सिंह ने वायरलैस पर सूचना दी कि तीन कुख्यात अपराधी फोन बूथ में डकैती करने के दौरान एनकाउंटर में मारे गये छात्र हार्डवेयर इंजीनियरिंग के छात्र थे। 1. विकास रंजन यादव 2. प्रशांत सिंह (आर0पी0एस0 कॉलेज) 3. हिमांशु यादव (जाकिर हुसैन संस्थान के बी0एस–एस0सी0 प्रथम के छात्र) 28 दिसम्बर 2002 को शास्त्रीनगर थाने के आशियाना दीघा रोड स्थित सम्मेलन मार्केट में शाम 4 बजे यह घटना हुई थी।

न्यायाधीश रवि शंकर सिन्हा ने घटना को "विरल से विरलतम" माना – पटना के तदर्थ अपर जिला एवं सत्र न्यायधीश रवि शंकर सिन्हा ने घटना को विरल से विरलतम माना। प्रदेश में पहली बार फर्जी मुठभेड कांड में कोर्ट में आरोपित पुलिस अधिकारी को फाँसी की सजा सुनाई। पटना आशियाना नगर फर्जी मुठभेड कांड में 12 साल बाद अदालत ने फैसला सुनाया।

सी0बी0आई0 द्वारा "विरल से विरलतम" माना गया देहरादून का रणवीर फर्जी पुलिस मुठभेड़ केस – 3 जुलाई 2009 देहरादून का रणवीर फर्जी मुठभेड काण्ड जिसमें सी0बी0आई0 द्वारा मृत्युदण्ड दिये जाने के पर्याप्त कारण बताये जाने और मांग करने पर भी दिल्ली की सी0बी0आई0 विशेष तीस हजारी अदालत द्वारा अभियुक्तों को आजीवन कारावास ही दिया गया। [7]

दिल्ली की तीस हजारी कोर्ट ने शुक्रवार 6 जून 2014 को, 3 जुलाई 2009 को हुई रणवीर सिंह फर्जी मुठभेड में 18 पुलिस वालों को दोषी करार दिया गया। देहरादून पुलिस ने एम0बी0ए0 छात्र को बदमाश बताकर देहरादून जोगीवाला रिंग रोड के निकट जंगल में मार दिया था। इस मामले में शनिवार 7 जून 2014 से सजा पर दोनों पक्षों की ओर से बहस शुरू हुई। विशेष सी0बी0आई0 जज जे0पी0एस0 मलिक की अदालत ने 30 जुलाई 2009 को इस फर्जी मुठभेड कांड में एक इंस्पैक्टर, पांच सब इंस्पैक्टर और एक कांस्टेबल को अपहरण व हत्या का दोषी ठहराया। दस पुलिस कर्मियों पर हत्या की साजिश व हत्या का जुर्म साबित हुआ जबकि एक को गलत साक्ष्य पेश करने का दोषी पाया गया। छात्र को बदमाश बताकर उसके एनकांउटर की पुलिस की कहानी का खुलासा पोस्टमार्टम रिपोर्ट में हुआ। रणवीर को जमकर पीटा गया था, उसके शरीर पर 27 गंभीर चोट के निशान थे और पुलिस वालों ने उसके शरीर पर 12 गोलियाँ मारी थी।

रणबीर फर्जी मुठभेड मामले में दोषी ठहराये गये 7 पुलिस कर्मियों की सजा पर शनिवार 7 जून 2014 को अदालत में बहस हुई। सी0बी0आई0 ने 17 में से 7 पुलिस कर्मियों के लिए अदालत से फाँसी की सजा की मांग की। ये 7 पुलिसकर्मी रणबीर की हत्या के दोषी पाये गये जबकि अन्य 10 पर अपहरण व हत्या की साजिश में शामिल होने का जुर्म साबित हुआ। तीस हजारी स्थित सी0बी0आई0 स्पेशल जज जे0पी0एस0 मलिक की अदालत में दोषी पुलिस कर्मियों की सजा पर अभियोजन बचाव पक्ष की बहस सुनने के बाद सोमवार 7 जून 2014

तक के लिये अपना फैसला सुरक्षति रखा। 17 पुलिस कर्मियों को हत्या व हत्या की साजिश का दोषी ठहराया जबकि एक पुलिसकर्मी को गलत पुलिस रिकार्ड पेश करने में दोषी पाया। इस पुलिसकर्मी को अदालत ने 50,000/– रूपये के निजी मुचलके पर रिहा करने के निर्देश भी दिये क्योंकि वह मामले की सुनवाई के दौरान पहले ही सजा से ज्यादा समय जेल में बिता चुका था।[8]

दुलर्भ से दुलर्भतम श्रेणी में आता है यह मामला – सी0बी0आई0

सी0बी0आई0 की तरफ से वरिष्ठ लोक अभियोजक बृजेश कुमार शुक्ला ने अदालत में सजा पर बहस करते हुए कहा कि इस पूरे मामले पर गौर करने पर साफ पता चलता है कि दोषी अधिकारियों का व्यवहार बेहद हिंसक था। यह मामला दुलर्भ से दुलर्भतम श्रेणी में आता है। ये पुलिस अधिकारी फांसी की सजा के ही हकदार हैं। सरकारी वकील ने यह भी कहा कि सब सजा दिये जाने से कोई सरकारी कर्मचारी इस तरह के कृत्य को अंजाम देने के बारे में सोच भी नहीं पायेगा। [10]

17 पुलिस कर्मियों को उम्रकैद

सी0बी0आई0 की विशेष अदालत ने सोमवार 9 जून 2014 देहरादून के बहुचर्चित फर्जी रणवीर मुठभेड कांड में दोषी 17 पुलिसकर्मियों को उम्रकैद की सजा सुनाई। इसमें से 7 पुलिसकर्मियों पर हत्या और शेष 10 पर अपहरण व हत्या की साजिश रचने के आरोप सिद्ध हुए।

सी0बी0आई0 द्वारा मामले को "विरल से विरलतम" बताये जाने पर भी पुलिस कर्मियों को फांसी देने का कोई ठोस आधार नहीं बताया अदालत ने [12] – 6 सवालों ने दोषियों को फांसी से बचाया –

परिस्थितिजन्य साक्ष्य

अदालत ने माना कि पुलिस की मुठभेड की कहानी को खोलना एक बड़ा चुनौती भरा काम था। सीधा कोई गवाह या साक्ष्य नहीं था। सी0बी0आई0 ने फारेंसिक रिपोर्ट के आधार पर रणवीर द्वारा कोई गोली नहीं चलाने की बात साबित की। परिस्थितिजन्य साक्ष्यों के आधार पर हत्या तो प्रमाणित होती है लेकिन इस आधार पर फांसी की सजादेना उचित नहीं।

साजिश के आधार पर सजा

मामले में सभी पुलिसकर्मियों पर हत्या की साजिश में शामिल होने का आरोप सिद्ध हुआ। अभियुक्तों ने मिलकर हत्या की साजिश। अपराध की सीधे संलिप्तता और उसकी साजिश में शामिल होना दो अलग बातें हैं। अभियुक्त किस तरह साजिश में शामिल हैं यह स्पष्ट नहीं हुआ। लिहाजा अदालत ने दोषी पुलिस कर्मियों उम्रकैद की सजा सुनाई।

तीन क्षेत्रों की पुलिस

अदालत ने माना कि इस घटना में सबसा बड़ा सवाल यह उठता है कि फर्जी एनकांउटर को अंजाम देने में दो थानों डलानवाला व नेहरू कालोनी एवं उत्तराखण्ड का स्पेशल ग्रुप शामिल रहा। तीन अलग–अलग क्षेत्रों की पुलिस इस साजिश में शामिल क्यों हुई। इसका खुलासा नहीं हुआ ऐसे में आधी–अधूरी जानकारी पर फॉसी जैसी सजा नहीं दी जा सकती।

समाज के लिये खतरा नहीं

अदालत ने माना फांसी देने का उद्देश्य समाज के लिये खतरा बने व्यक्ति या व्यक्तियों का अन्त करना है लेकिन इस मामले में अभियुक्त पुलिसकर्मी है और उनका पूर्व का कोई आपराधिक रिकार्ड भी नहीं है। दूसरा इस एनकाउंटर में अधिकांश पुलिसकर्मी सीधे तौर पर शामिल नहीं रहे हैं जिससे माना जा सकता है कि उनकी प्रवृत्ति समाज के विपरीत नहीं रही।

अधिकांश दोषी (स्वयं निर्णायक क्षमता रहित) कांस्टेबल

अदालता ने माना कि इस घटना में शामिल रहे अधिकांश पुलिसकर्मी कांस्टेबल हैं इनकी उम्र कम है और घटना के समय यह हथियारबंद भी नहीं थे। यह सवाल जरूर उठता है कि शायद ये अपने वरिष्ठ अधिकारियों के आदेश का पालन कर रहे हों। इन कांस्टेबलों के पास कोई हथियार न होने का मतलब उनको साजिश में शामिल करता है सीधे अपराध में उनकी संलिप्तता पर संदेह उत्पन्न करता है इसलिये इन्हें साजिश में शामिल मानना और उम्र कैद की सजा दिया जाना सही माना गया।

रायपुर थाना पुलिस कहाँ थी

अदालत ने माना कि घटना वाले दिन तत्कालीन राष्ट्रपति प्रतिभा सिंह पाटिल क्षेत्र के दौरे पर थी और पूरा शहर हाई अर्लट पर था। ऐसे समय में रायपुर थाने के क्षेत्र में आने वाले लाडपुर के जंगलों में रणवीर का एनकाउंटर किया गया लेकिन स्थानीय थाना पुलिस को न इसकी जानकारी थी और न ही इस अभियान में स्थानीय पुलिस शामिल थी।

फांसी के पक्षधर नहीं रहे मुख्य न्यायाधीश पी0 सदाशिवम।[13]

मुख्य न्यायाधीश जस्टिस पी0 सदाशिवम ने पदभार ग्रहण करते समय दैनिक हिन्दुस्तान (हिन्दी) में दिये गये साक्षात्कार में कहा था कि वह व्यक्तिगत रूप से फांसी की सजा के विरोधी हैं। उन्होंने कहा था कि यदि कोई ऐसा घटना है जिसमें आदमी में किलिंग मशीन की तरह योजना बनाकर सामूहिक हत्यायें की हैं तो उनमें फांसी की सजा दी जा सकती है। लेकिन अन्य अपराधों में नहीं। जस्टिस सदा शिवम ने मुम्बई ब्लास्ट के मामले में सिर्फ एक ही दोषी को फांसी दी थी और बाकी फांसी माफ कर दी थी। उन्होंने कहा था कि वह प्रभार लेने के बाद दया याचिकाओं में हो रही देरी के मामलों पर अधिकृत व्यवस्था के लिये विशेष पीठ बनायेंगे ताकि संशय की स्थिति साफ हो।

राजेन्द्र प्रसाद बनाम उत्तर प्रदेश के वाद में उच्चतम न्यायालय के समक्ष मृत्यु के दण्डादेश के विपरीत तीन अपीलें विचारार्थ प्रस्तुत की गई थी। पहली अपील राजेन्द्र प्रसाद की थी। आजीवन कारावास की सजा काटने के बाद पारिवारिक बैर से प्रेरित होकर उसने दूसरी हत्या कर दी थी। उच्चतम न्यायालय के न्यायधीशगण सर्वश्री बी0आर0 कृष्ण अय्यर और श्री डी0ए0 देसाई ने यह अभिनिर्धारित किया कि अपीलकर्ता एक अति भयंकर और असाध्य अपराधी नहीं था। पूर्ववर्ती कारावास की सजा से उसका सुधार नहीं हो पाया था। जनता के लिये वह खतरनाक व्यक्ति नहीं है। उसने ऐसा

कुछ भी प्रदर्शित नहीं किया है कि वह परित्राण के बाहर हो चुका है, और न ही कुछ ऐसा भी प्रदर्शित हुआ है कि वह अपने सहमानव के प्रति हिंसक हो सकता है। मृत्युदण्ड देने के लिये उसके साथ कोई विशेषण कारण भी सम्बद्ध नहीं है। इससे भी बड़ी बात यह है कि मृत्युदण्ड उसके सिर पर 1973 ईसवी से मंडरा रहा है। अतः उसके मृत्यु के दंडादेश को आजीवन कारावास में परिवर्तित कर दिया गया। [14]

दूसरी अपील कुन्जु कन्जु जनार्दन की थी, जो केरल राज्य के विपरीत की गई थी। अपीलकर्ता ने यद्यपि एक दूसरी महिला के प्रेम में पड़कर अपनी पत्नी और दो बच्चों की हत्या कर दी थी, परन्तु उच्चतम न्यायालय के अनुसार समाज की सुरक्षा के लिए उसने अपने को खतरनाक प्रदर्शित नहीं किया था। अति कामुक व्यक्तियों के लिये मृत्युदण्ड की अपेक्षा या तो ऐच्छिक अण्डाकर्षण अथवा कामोत्तेजना के विपरीत उपचार का कार्य सम्पादित किया जाना चाहिए। अपीलकर्ता के संदर्भ में ऐसी कोई सूचना प्रस्तुत नहीं की गई है कि वह एक दुस्साहसिक आनन्दवादी अथवा अतिरिक्त "वाई" पित्रसूत्रों ¼'Y' Chromosomes in excess) से युक्त एक कामातुर बलात् सन्धि है, जिसके कारण अपने क्षेत्र में वह एक कामुक तूफान सा लोगों के लिए भयानक बन गया है। उसकी अपील को स्वीकार कर आजीवन कारावास की सजा प्रदान की गई। [15]

तीसरी अपील शिव शंकर दूबे की थी, जो उत्तर प्रदेश राज्य के विपरीत की गई थी। अपीलकर्ता 18 या 20 वर्ष की आयु का युवक था। पारिवारिक बंटावारे में उसने अपने तीन सगे–सम्बन्धियों की हत्या कर दी थी, जो झगड़े की उत्तेजना से प्रेरित थी। पारिवारिक झगड़ा, आकस्मिक उद्वेग, युवा अवस्था, सुधार की युक्तियुक्त संभाव्यता, अभियुक्त का अभ्यस्त अपराधी अथवा पहले से ही घोर हिंसक न होना, उच्चतम न्यायालय की राय में ऐसे हेतुक थे, जो मृत्युदण्ड नहीं वरन् आजीवन कारावास को न्यायानुमोद्य बनाते थे।[16]

बिशुन देव शा बनाम वेस्ट बंगाल (1979) 3 एस0सी0सी0 714 – के वाद में अपीलकर्ता ने अपनी पत्नी पर चरित्रहीनता का संदेह होने पर उसकी हत्या कर दी थी और दण्ड को भोग लेने के बाद उसी पत्नी से उत्पन्न अपने पुत्र को भी इस संदेह पर जान से मार डाला था कि वह उससे उत्पन्न नहीं है। सेशन न्यायालय ने मृत्युदण्ड की सजा दी थी और उच्च न्यायालय ने इसकी पुष्टि की थी। उच्चतम न्यायालय ने उसकी अपील स्वीकार करके मृत्युदण्ड के स्थान पर आजीवन कारावास की सजा प्रदान की थी। न्यायधीश चिन्नपा रेड्डी ने यह अभिमत व्यक्त किया कि दण्ड के विभिन्न सिद्धान्त न तो मृत्युदण्ड का समर्थन करते हैं और न ही उसे न्यायनुमत ठहराते हैं। सुधारात्मक सिद्धान्त वहाँ प्रासंगिक है ही नहीं, जहाँ दण्ड मृत्यु है, क्योंकि जीवन ही, न कि मृत्यु, किसी व्यक्ति को सुधार सकता है। इस विषय पर जितने भी अध्ययन किये गये हैं, वे सब यही निष्कर्ष व्यक्त करते हैं कि भयोपरक सिद्धान्त के संदर्भ में मृत्युदण्ड असंगत है।[17]

शिदागाउदा निनगप्पा घंटुवार बनाम कर्नाटक (1981) 1 एस0सी0सी0 164 – के वाद में उच्चतम न्यायालय ने पुनः यह अभिमत व्यक्त किया है कि अत्यन्त पराकाष्ठा पर पहुँचे हुए प्रकरणों में ही मृत्युदण्ड को दिया जाना चाहिए। अभियुक्त यदि अभ्यस्त अपराधी नहीं है, और उसने एक भूमि विवाद में यदि किसी बालक की हत्या कर दी है तो उसे मृत्युदण्ड नहीं, अपितु आजीवन कारावास की सजा दी जानी चाहिए और सरकार को चाहिए कि वह अत्यन्त यदा–कदा मामलों में ही आजीवन कारावास के दण्ड को 14 वर्ष से कम करे जैसे कि दण्ड प्रक्रिया संहिता 1973 की धारा 433–क में भी अनुचिन्तित किया गया है।[18]

मारूराम बनाम इंडिया (1981) 1 एस0सी0सी0 107 – के वाद में दण्ड प्रक्रिया संहिता 1973 की धारा 433क की संवैधानिकता को स्वीकृति प्रदान की गई है।

बचन सिंह बनाम पंजाब (1980) 2 एस0सी0सी0 684 के वाद में एक के विपरीत चार न्यायधीशों ने मृत्युदण्ड की संवैधानिकता पर पुनः स्वीकृति प्रदान कर दी है। उच्चतम न्यायालय का अभिमत है कि न्यायधीशों को कभी भी रक्त पिपासु नहीं होना चाहिए। हत्यारों को फांसी पर लटकाना उन्हें कभी भी अच्छा नहीं लगता। दण्ड प्रक्रिया संहिता 1973 की धारा 354 (3) के अन्तर्गत आजीवन कारावास नियम और मृत्युदण्ड अपवाद माना गया है। यदि हत्या पूर्व नियोजन और घोर नृशंसा के साथ नहीं की गई है या यदि हत्या के साथ घोर दुराचारिता संलिप्त नहीं है या यदि हत्या संघ के किसी सशस्त्र दल के सदस्य अथवा किसी पुलिस बल के सदस्य या किसी लोक सेवक की नहीं की गई है और उस समय नहीं की गई है जब ऐसा सदस्य या लोक सेवक कर्तव्यस्थ था अथवा उस रूप में उसके द्वारा सम्पादित किये गये कार्यों के परिणाम स्वरूप नहीं किये गये हैं, या हत्या किसी ऐसे व्यक्ति की नहीं की गई है, जिसने दंड प्रक्रिया संहिता 1973 की धारा 43 के अन्तर्गत अपने कर्तव्यों के विधि पूर्ण निष्पादन में कार्य किया है या उसने इसी संहिता की धारा 37 और धारा 29 के अन्तर्गत किसी मैजिस्ट्रेट अथवा पुलिस अधिकारी को सहायता पहुँचाई है। उच्चतम न्यायालय ने इस प्रकार ऊपर वर्णित विनिश्चयों में यद्यपि मृत्युदण्ड को देना अस्वीकार तो नहीं किया है परन्तु उसने उसे अत्यन्त यदा–कदा मामलों में ही देना स्वीकार किया है। [19]

दूधनाथ पांडे बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (1981) 2 एस0सी0सी0 166 – के मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था आजीवन कारावास के दंडादेश के नियम से विचलित होना अब औचित्यपूर्ण नहीं माना जायेगा। इस मामले में महाविद्यालय में पढने वाले परिवार के एकमात्र पुरूष व्यक्ति की हत्या कर दी गई थी। अभियुक्त के मस्तिष्क में प्रबल अशांति का विद्यमान होना क्योंकि उसकी निम्न सामाजिक प्रतिष्ठा पर चोट पहुँचायी गई थी और हत्या के पूर्व अभियुक्त और मृतक के बीच वाद कलह का होना ऐसा हेतुक माना गया कि मृत्युदण्ड की पुष्टि औचित्यपूर्ण नहीं मानी गई और मृत्यु का दण्डादेश आजीवन कारावास में परिवर्तित कर दिया गया। [20]

मुनीयप्पन बनाम तमिलनाडु (1981) 3 एस0सी0सी0 11 – 1982 उम0नि0प0 919 – के मामले में विशेष कारणो की परिधि में आतंक से परिपूर्ण दोहरी

हत्या जैसे अस्पष्ट कारण को सम्मिलित तो नहीं किया गया है किन्तु यह अभिनिर्धारित किया गया है कि न्यायालय को चाहिए कि वह धारा 333 (2) के अन्तर्गत अभियुक्त से प्रासंगिक सूचना प्राप्त करे। मृत्यु के दण्डादेश को पुष्ट करते समय उच्च न्यायालय को चाहिए कि वह सावधानीपूर्वक मामले की छानबीन करे और विभिन्न पक्षों को दृष्टि में रखते हुए उस पर विनिश्चय ले। मामले की दुर्बलताओं की ओर यदि उच्च न्यायालय का ध्यान नहीं गया है और वह उनका उचित मूल्यांकन करने में विफल रहा है तो किन्हीं विशेष कारणों के अभाव में और हत्यारों को "निष्ठुर हत्यारों" की संज्ञा देकर मृत्युदण्ड के दंडादेश की पुष्टि नहीं की जा सकती। 21

किशोरी बनाम स्टेट ऑफ दिल्ली 1999 लॉ0ज0 584 (सु0क0) के वाद में यह अभिनिर्धारित किया गया कि मृत्युदण्ड बिरले में भी अधिक बिरले मामलों में ही दिया जा सकता है। जैसे यदि ऐसी कोई गंभीर कारक परिस्थितियाँ हों जैसे भूतकाल में अभियुक्त का अपराधिक रिकार्ड अपराध कारित किये जाने का तरीका दंडित किये जाने में विलम्ब इत्यादि। इस मामले में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी की हत्या के पश्चात् दिल्ली में बलवा भड़क उठा था और उनकी मृत्यु के कारण ही लोगों में भाववेश पैदा हो गया था। अपराध शास्त्र के विशेषज्ञ बहुदा यह मत व्यक्त करते हैं कि जब कभी भी किसी समूह द्वारा कार्य किया जाता है जैसा कि भीड़ का कार्य ऐसी दशा में व्यक्तिगत दायित्व कम हो जाता है। जब तक कि ऐसी विशेष परिसितियाँ न हों जो इस बात की ओर संकेत करती हैं कि किसी व्यक्ति विशेष ने पूर्व विचारण के साथ जैसे किसी सामान्य रूप में न पाये जाने वाले अस्त्र का प्रयोग कर कार्य न किया हो। परन्तु यदि किसी भीड़ का सदस्य ऐसी किसी चीज या अस्त्र को उठा लेता है जो निकट ही पड़ा हो और तब भीड़ में सम्मिलित होता है और यदि अपनी इच्छा अनुसार अथवा भीड़ के उकसाने पर कोई कार्य करता है परन्तु उसकी अगुवाई नहीं करता है तो ऐसा माना जायेगा कि उस व्यक्ति का आशय उन सभी कार्यों को करने का नहीं था जो उस भीड़ ने कारित किया हो। और स्वयमेव उसे न करता परन्तु ऐसा भीड़ की सक्रिय उत्तेजना के प्रभाव में आकर किया है।[22]

त्रिवेणी बेन बनाम गुजरात राज्य के मामले में उच्चतम न्यायालय ने टी0वी0 वथेश्वरन् बनाम तमिलनाडु राज्य के निर्णय को उलटते हुए यह निर्णय दिया कि मृत्युदण्ड के कार्यान्वयन में अनुचित अत्यधिक विलम्ब अपराधी को अनुच्छेद 32 के अन्तर्गत उच्चतम न्यायालय ने याचिका दाखिल करने का अधिकार देता है परन्तु न्यायालय केवल विलम्ब की प्रकृति और मृत्युदण्ड की न्यायिक प्रक्रिया द्वारा अन्तिम पुष्टि के बाद की परिस्थितियों का ही परीक्षण करेगा परन्तु मृत्युदण्ड को अन्तिम रूप से स्वीकार करके समय के निष्कर्षों पर पुर्नविचार का अधिकार नहीं होगा। न्यायालय अत्यधिक विलम्ब के प्रश्न पर मामले की समस्त परिस्थितियों पर विचार इस उद्देश्य से करेगा कि क्या मृत्युदण्ड का कार्यान्वयन किया जाये अथवा उसका लघुकरण। आजीवन कारावास के रूप में किया जा सकता है परन्तु मृत्युदण्ड के कार्यान्वयन में विलम्ब की कोई ऐसी निश्चित अवधि निर्धारित नहीं की जा सकती जिससे उसे कार्यान्वित किये जाने से रोका जा सके। [23]

मृत्युदण्ड का दण्डादेश न्याय के विपरीत कार्य करता है क्योंकि दाण्डिक न्याय का महत्वपूर्ण उद्देश्य अपराधी का सुधार करना और उसे पुनर्वास प्रदान करना है। मृत्यु का दण्डादेश इस उद्देश्य को अपनी अस्वीकृति प्रदान करता है।

"विरल से विरलतम" सिद्धान्त तथा मृत्युदण्ड को प्रभावित करती विधायन के क्षेत्र में सुधारवाद की लहर

विधायन के क्षेत्र में सुधारवार की लहर के कारण मृत्युदण्ड को समाप्त किये जाने की मांग में जोर पकड़ा तथा स्वतंत्रता के प्रारिम्भक दो दशकों में मृत्युदण्ड की समाप्ति के लिये निरन्तर प्रयास किये जाते रहे किन्तु इसके पक्ष में भी लोगों ने मत व्यक्त किये। अतः इसे समाप्त नहीं किया जा सका।

मृत्युदण्ड को समाप्त किये जाने के प्रस्ताव

1. 1949 में प्रथम बार लोकसभा में रखा गया लेकिन तत्कालीन गृहमंत्री सरदार वल्लभ भाई पटेल ने इसे समयानुकूल न होने के आधार पर इसी अस्वीकार कर दिया।
2. 1952 और 1954 में भारतीय दंड संहिता में संशोधन के समय भी मृत्युदण्ड की समाप्ति की आवाज उठाई गई लेकिन इसका कोई प्रभाव नहीं हुआ।
3. 1956 में मुकुन्द अग्रवाल द्वारा लोकसभा में रखा गया मृत्युदण्ड समाप्ति का प्रस्ताव भी पारित नहीं हो सका।
4. 1958 में विख्यात सिने अभिनेता पृथ्वीराज कपूर ने ऐसा ही एक विधेयक राज्य सभा में पेश किया जो पंडित गोविंद वल्लभ पंत के अनुरोध पर वापस ले लिया गया। इस सम्बन्ध में उनके उद्गार थे – "अपने विचार से हम चाहते हैं कि देश में ऐसी परिस्थिति हो कि न तो कोई मारा जाये, न किसी की हत्या हो ओर न किसी को फाँसी पर लटकाया जाये। किन्तु हमें इस प्रश्न पर व्यवहारिक दृष्टि से विचार करना चाहिए – हत्यायें होती हैं कुछ तो अत्यन्त पाशविक ढंग से होती है अतः मैं समझाता हूँ कि मृत्युदण्ड समाप्त कर देने से उद्देश्य पूरा न होगा।"
5. 1961 25 अगस्त को श्रीमती सावित्री निगम का मृत्युदण्ड समाप्त किये जाने सम्बन्धी विधेयक राज्य सभा के पटल पर रखा गया जिसे बहस के बाद अस्वीकार कर दिया गया।
6. 1962 में रघुनाथ सिंह ने मृत्युदण्ड समाप्त करने का प्रश्न दिनांक 21 अप्रैल को लोकसभा में उठाया जिसमें बहस के बाद यह प्रश्न विचार हेतु विधि आयोग को सौंपने का निर्णय लिया परिणामतः सन् 1963 में यह प्रश्न विधि आयोग को सौंप दिया गया।
7. 1961 में दिल्ली में आयोजित एक राष्ट्रीय संगोष्ठी में मृत्युदण्ड को समाप्त किये जाने के प्रश्न पर विधि वेत्तओं की विस्तृत चर्चा हुई लेकिन देश की गिरती हुई शांति व्यवस्था की स्थिति को ध्यान में रखते हुए मृत्युदण्ड को समाप्त न किये जाने के पक्ष में ही बहुमत रहा
8. 1982 में दिल्ली में आयोजित दंड विधि पर अन्तर्राष्ट्रीय कांग्रेस ने भी मृत्युदण्ड के औचित्य पर विस्तृत चर्चा हुई जिसमें उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायधीश मा0 कृष्ण अय्यर ने मृत्युदण्ड को समाप्त किये जाने की भरसक कोशिश की लेकिन अधिकांश वक्ताओं ने उनके विचारों का समर्थन नहीं किया तथा मृत्युदण्डत को दंड

विधि में बनाये रखना ही उचित माना । तथापि वे इस बात से सहमत से थे इस दण्ड का प्रयोग बिरले मामलों में ही किया जाना चाहिए। इस संगोष्ठी में अपने अध्यक्षीय भाषण के भारत के तत्कालीन उपराष्ट्रपति मा0 हिदायतुल्ला जो उच्चतम न्यायालय के पूर्व न्यायधीश भी रह चुके ने मृत्युदण्ड के बारे में अपने विचार करते हुए कहा कि इस सम्बन्ध में भारतीय दंड विधि में अपनाया गया यह सिद्धान्त कि "मृत्युदण्ड विरले मामलों में ही दिया जाये उचित एवं व्यवहारिक है।"

लेख की विशिष्टता

उपरोक्त कुछ ऐसे महत्वपूर्ण वादों को सी0बी0आई0 अथवा अन्य न्यायालयों द्वारा "विरल से विरलतम" श्रेणी में रखे जाने पर भी उच्चतम न्यायालय द्वारा अप्रासंगिक मानते हुए मृत्युदण्ड के स्थान पर संशोधित आजीवन कारावास दिया जाना "विरल से विरलतम" सिद्धान्त की प्रासंगिकता को सिद्ध करता है।

प्रस्तुत लेख में उपरोक्त चयनित कुछ महत्वपूर्ण वादों में मृत्युदण्ड दिया जाना अथवा नहीं दिया जाना अथवा मृत्युदण्ड संशोधित कर आजीवन कारावास दिया जाना अथवा अमेरिका के कार्लोस डेलुना को दिये गये मृत्युदण्ड का गैरवापसीय होना, उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रतिपादित "विरल से विरलतम" सिद्धान्त के औचित्य को सिद्ध करता है।

अतः निश्चित रूप से हम कह सकते हैं कि उच्चतम न्यायालय द्वारा "विरल से विरलतम" सिद्धान्त का प्रतिपादन करते समय संविधान के अनुच्छेद 14, 19 और 21 पर पूर्ण गम्भीर संज्ञान लिया गया है। अपराध की गम्भीरता, अपराधी का पूर्व इतिहास अथवा पृष्ठभूमि अपराध की परिस्थिति जन्य स्थितियाँ, अपराध का तरीका तथा भविष्य में अपराधी से समाज को संभावित संकट आदि बिन्दुओं को आधार मानकर माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा "विरल से विरलतम" सिद्धान्त को प्रतिपादित कर क्रियान्वित किया गया अथवा किया जा रहा है यह नितान्त प्रासंगिक, औचित्यपूर्ण और विधिक क्षेत्र में सकारात्मकता के साथ प्रभावी है। जिसकी परिणति यह रही कि 1950 से अब तक 157 मृत्युदण्ड ही दिया जाना सिद्ध करता है कि मृत्युदण्ड की अपेक्षित संख्या जो कई गुना हो सकती थी का न बढ़ना, एमनेस्टी इंटरनेशनल, मानव अधिकार संगठन का सक्रिय होना, संयुक्त राष्ट्र महासचिव मून द्वारा मृत्युदण्ड समाप्ति पर दृष्टव्य विचार देना, समय–समय पर भारत के माननीय सांसदों सर्वश्री मुकुन्द अग्रवाल (1956), पृथ्वीराज कपूर (1958), श्रीमती सावित्री निगम (1961), एवं रघुनाथ सिंह (1962) आदि के प्रस्ताव मृत्युदण्ड की समाप्ति पर आना, न्यायमूर्ति राजेन्द्र सच्चर, पूर्व मुख्य न्यायाधीश श्रीकृष्ण अय्यर, पूर्व मुख्य न्यायाधीश पी0 सदाशिवम्, उच्चतम न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश और पूर्व उपराष्ट्रपति माननीय हिदायतुल्ला (1982 में दंड विधि पर अन्तर्राष्ट्रीय कांग्रेस में) द्वारा "विरल से विरलतम" सिद्धान्त को प्रासंगिक मानते हुए प्रस्तुत किये गये मृत्युदण्ड न दिये जाने के विचार भी उच्चतम न्यायालय के "विरल से विरलतम" सिद्धान्त के सकारात्मक औचित्य की पुष्टि करते हैं। प्रस्तुत लेख में कई अतिमहत्वपूर्ण मामलों में भी उच्चतम न्यायालय द्वारा "विरल से विरलतम" स्थिति न मानते हुए "विरल से विरलतम" सिद्धान्त को लागू नहीं किया गया बल्कि दण्ड के महत्वपूर्ण उद्देश्य "सुधार तथा पुनर्वास" को प्राथमिकता देते हुए मृत्युदण्ड का वैकल्पिक दण्ड आजीवन कारावास ही दिया गया। यह स्पष्टता से उल्लेख किया गया कि जिस कारण भारत के उच्चतम न्यायालय द्वारा अपनाये गये "विरल से विरलतम" के सिद्धान्त का जीवनदान जैसा लाभ अभियुक्तों को स्वयं तो अप्रत्याशित रूप से प्राप्त हुआ ही, न्यायिक क्षेत्र के मूल उद्देश्य "न्याय" को स्थापित करने में भी बल प्राप्त हुआ जिसका "सुधार तथा पुर्नवास" प्राप्त होने के पश्चात् समाज को भी प्राप्त हुआ। संक्षेप में हम निश्चित रूप से कह सकते हैं कि उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रतिपादित "विरल से विरलतम" सिद्धान्त के चलते ही न्यायिक प्रक्रिया में दूषित पहचान, दूषित साक्ष्य, अविश्वनीय विशेषज्ञ साक्ष्य, अपर्याप्त स्थितिजन्य साक्ष्य तथा न्यायिक पैरवी में अक्षमता की उपस्थिति के कारण अपेक्षित दण्ड आजीवन कारवास अथवा अन्य दंड के स्थान पर मृत्युदण्ड नहीं दिया जा सका जिससे अभियुक्तों को "सुधार और पुनर्वास" के रूप में दण्ड के प्रमुख उद्देश्य का लाभ प्राप्त हो सका। साथ ही साथ उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रतिपादित "विरल से विरलतम" सिद्धान्त ने जहाँ भारतीय संवैधानिक, विधिक और दाण्डिक व्यवस्था पर अपना सकारात्मक, निष्पक्ष और पारदर्शी एवं विश्वसनीय प्रभाव छोड़ा वहीं भारतीय संसदीय व्यवस्था पर भी अमिट छाप छोड़ी, भारत के माननीय सांसदों द्वारा 1949 से अद्यतन समय–समय पर मृत्युदण्ड समाप्ति के प्रस्ताव और विधेयक लाना इसका सपुष्ट ज्वलन्त उदाहरण है। यही नहीं राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर एमनेस्टी इण्टरनेशनल, मानवाधिकार संगठन तथा संयुक्त राष्ट्र संघ में भी भारतीय न्याय व्यवस्था को एक प्रतिष्ठित, उच्च कोटि का सशक्त आयाम दिया।

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में हम उपरोक्त महत्वपूर्ण वादों का अध्ययन कर कह सकते हैं कि 30 जनवरी 1948 को घटित महात्मा गाँधी हत्या केस को भले ही "विरल से विरलतम" श्रेणी में घोषित न किया हो लेकिन महात्मा गाँधी जैसे राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यक्तित्व के परिप्रेक्ष्य में केस को अति महत्वपूर्ण मानते हुए घोषित मुख्य हत्या अभियुक्तों नाथूराम गोड़से तथा नाना आप्टे को मृत्युदण्ड दिया गया, माझी सिंह बनाम पंजाब राज्य 1983 क्रिमिनल लॉ जे0 1457 में घटना को बर्बतापूर्ण एवम् निमर्म ढंग से दुष्परिणति देने के कारण मृत्युदण्ड दिया गया, कुलजीत (रंगा) बनाम भारत संघ ए0आई0आर0 1981 सुप्रीम कोर्ट के वाद में स्कूली छात्रा का अपहरण व बलात्कार कर हत्या के अपराध में मृत्युदण्ड दिया गया। अशर्फीलाल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य ए0आई0आर0 1987 सुप्रीम कोर्ट 1727 ने बदले की भावना से की गई एक महिला और दो अबोध बालिकाओं की हत्या को जानबूझकर तथा निदर्यतापूर्वक की गई हत्या में प्रतिरोधात्मक मृत्युदण्ड देना आवश्यक समझा, मुम्बई के फोटो पत्रकार सामूहिक बलात्कार केस में बलात्कार की संशोधित धारा 376(ई) में अपराधियों को दोषी मानते हुए मुम्बई की सत्र न्यायाधीश शालिनी फंसाल्कर जोशी द्वारा 4 अप्रैल 2001 को मृत्युदण्ड दिया जाना उचित समझा, 16 दिसम्बर 2012 को घटित दिल्ली के निर्भया सामूहिक बलात्कार केस में मामले को जघन्य, अमानवीय और बर्बरतापूर्ण किया गया अभूतपूर्व केस मानते हुए मृत्युदण्ड दिया जाना उचित समझा, 21 मई 1991 को घटित पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गाँधी हत्या केस में 11 वर्ष के अतिविलम्ब

के मध्य प्रताड़ना, मानसिक वेदना की दलील को गम्भीर एवं प्रमुख आधार मानते हुए दिये गये मृत्यूदण्ड को आजीवन कारावास में संशोधित कर दिया गया अतः यहाँ सिद्ध होता है कि मृत्युदण्ड के क्रियान्वयन में अति विलम्ब की प्रकृति "विरल से विरलतम" सिद्धान्त को लागू होने से रोकती है। मगन लाल केस में जिसमें 5 बेटियों को उसने 11 जून 2010 को मौत के घाट उतार दिया था तुरत–फुरत निचली अदालत से उच्चतम न्यायालय तक मृत्युदण्ड दिये जाने के पश्चात् "बर्खास्त" शब्द प्रयोग करते हुए मामला निस्तारित कर दिया गया लेकिन दूषित पहचान, दूषित साक्ष्य, अविश्वनीय विशेषज्ञ साक्ष्य, अपर्याप्त स्थितिजन्य साक्ष्य आदि बिन्दुओं में से एक महत्त्वपूर्ण बिन्दु न्यायिक पैरवी में अक्षमता की उपस्थिति केस को "विरल से विरलतम" श्रेणी में नहीं ला सकी और प्रगतिशील अधिवक्ताओं सर्वश्री युग चौधरी, ऋषभ संचेती, गोंजालिब्स तथा अधिवक्ता सिद्धार्थ ने मृत्युदण्ड के विरूद्ध स्थगन आदेश प्राप्त कर केस की प्रकृति को विचित्र एवं अभूतपूर्व बना दिया, त्रिवेणी बेन बनाम गुजरात राज्य और राजीव गाँधी हत्या केस में 11 वर्ष के अनुचित अत्यधिक विलम्ब को महत्वपूर्ण आधार मानते हुए मृत्युदण्ड के स्थान पर आजीवन कारावास दिया गया। सर्वेश्वर प्रसाद शर्मा बनाम मध्य प्रदेश 1977 एस0सी0सी0 322 के वाद में मौद्रिक लाभ अर्जित करने के उद्देश्य से घनिष्ठ मित्र द्वारा मित्र सहित उसके 60 वर्षीय माता–पिता 25 वर्षीय मित्र की पत्नी और 16, 13, 8, 5, और 3 वर्षीय मित्र के बच्चों को मौत के घाट उतार दिये जाने पर अभियुक्त को जघन्य अकृत्यज्ञता तथा घोर पशुता और लालच से युक्त राक्षसी कृत्य को आधार मानते हुए "विरल से विरलतम" श्रेणी में रखा और मृत्युदण्ड दिया जाना उचित समझा, धनंजय चटर्जी उर्फ धन्ना बनाम पश्चिम बंगाल राज्य ए0आई0आर0 2004 सुप्रीम कोर्ट के मामले में स्कूली छात्रा का बलात्कार कर हत्या कर दिये जाने के अपराध को भी "विरल से विरलतम" मानते हुए मृत्युदण्ड देना उचित समझा, 28 दिसम्बर 2002 सांय 4 बजे घटित पटना के शास्त्रीनगर थाने के आशियाना स्थित फर्जी मुठभेड़ केस में तीन छात्रों विकास रंजन यादव, प्रशान्त सिंह एवं हिमांशु यादव को मौत के घाट उतार दिया गया था। न्यायालय द्वारा मुख्य आरोपी पुलिस उप निरीक्षक शम्से आलम को मामले को "विरल से विरलतम" मानते हुए जिला एवं सत्र न्यायाधीश रवि शंकर सिन्हा ने 12 वर्ष पश्चात् 24 जून 2014 को फाँसी दिया जाना उचित समझा। उपरोक्त लेख में वर्णित स्थितियाँ विभिन्न केसों के घटनाक्रमों की घटित परिस्थितियों एवं स्थितियों तथा अपराधी की आपराधिक प्रवृत्तियों के प्रस्तुतीकरण के साथ–साथ केसों की दाण्डिक, न्यायिक, विधिक एवं संवैधानिक मापदण्डों का निष्कर्ष भी है। उपरोक्त सभी वादों के निष्कर्ष "विरल से विरलतम" सिद्धान्त में निहित अपराधी की पुष्ट पहचान, पुष्ट साक्ष्य, पर्याप्त स्थितिजन्य साक्ष्य, विश्वसनीय विशेषज्ञ साक्ष्य जो अपराध को "विरल से विरलतम" बनाते हों आदि महत्वपूर्ण बिन्दुओं की ओर गम्भीरता से विधिक विशेषज्ञों का ध्यान केन्द्रित करते हैं, यह लेख में प्रस्तुत विभिन्न महत्त्वपूर्ण केसों के घटनाक्रमों से सिद्ध होता है। यही भारतीय उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रतिपादित "विरल से विरलतम" सिद्धान्त की प्रासंगिकता और विधिक प्रभाव तथा औचित्य सिद्ध करता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *गोपाल उपाध्याय द्वारा लिखित अपराध शास्त्र एवं दण्ड शास्त्र के पृष्ठ 118*
2. *मुम्बई वरिष्ठ संवाददाता दैनिक हिन्दुस्तान शनिवार 5 अप्रैल, 2014 के प्रथम पृष्ठ पर प्रकाशित*
3. *वरिष्ठ संवाददाता दैनिक हिन्दुस्तान, नई दिल्ली 14 मार्च 2014 में प्रकाशित*
4. *नाथूराम गोडसे के भाई गोपाल गोड़से द्वारा लिखित पुस्तक "गाँधी वध और मैं" के पृष्ठ संख्या 226 से उद्धृत।*
5. *दैनिक हिन्दुस्तान (हिन्दी) 19 फरवरी 2014 के अंक के प्रथम पृष्ठ पर प्रकाशित।*
6. *दैनिक हिन्दुस्तान (हिन्दी) बुधवार, 25 जून 2014 के पृष्ठ संख्या 10 पर प्रकाशित*
7. *दैनिक हिन्दुस्तान शनिवार 7 जून 2004 के प्रथम पृष्ठ पर प्रकाशित।*
8. *दैनिक हिन्दुस्तान (हिन्दी) रविवार 8 जून 2004 के प्रथम पृष्ठ पर प्रकाशित।*
9. *दैनिक हिन्दुस्तान (हिन्दी) मंगलवार 8 जून 2004 के प्रथम पृष्ठ पर प्रकाशित।*
10. *दैनिक हिन्दुस्तान (मंगलवार) 10 जून, 2014 के पृष्ठ 4 पर प्रकाशित।*
11. *दैनिक हिन्दुस्तान (हिन्दी) 19 फरवरी 2014*[1]
12. *डॉ0 मुरलीधर चतुर्वेदी द्वारा लिखित "अपराध शास्त्र एवं दण्ड शास्त्र" के पृष्ठ संख्या 205 से (1979) 3 (1979) एस0सी0सी0 646 से उद्धृत*
13. *डॉ0 मुरलीधर चतुर्वेदी द्वारा लिखित "अपराध शास्त्र एवं दण्ड शास्त्र" के पृष्ठ संख्या 206 से (1979) 3 (1979) एस0सी0सी0 646 से उद्धृत*
14. *डॉ0 मुरलीधर चतुर्वेदी द्वारा लिखित "अपराध शास्त्र एवं दण्ड शास्त्र" के पृष्ठ संख्या 206 से (1979) 3 (1979) एस0सी0सी0 646 से उद्धृत*
15. *डॉ0 मुरलीधर चतुर्वेदी द्वारा लिखित "अपराध शास्त्र एवं दण्ड शास्त्र" के पृष्ठ संख्या 206 से (1979) 3 (1979) एस0सी0सी0 646 से उद्धृत*
16. *डॉ0 मुरलीधर चतुर्वेदी द्वारा लिखित "अपराध शास्त्र एवं दण्ड शास्त्र" के पृष्ठ संख्या 207 से (1979) 3 (1979) एस0सी0सी0 646 से उद्धृत*
17. *डॉ0 मुरलीधर चतुर्वेदी द्वारा लिखित "अपराध शास्त्र एवं दण्ड शास्त्र" के पृष्ठ संख्या 207 से (1979) 3 (1979) एस0सी0सी0 646 से उद्धृत*
18. *डॉ0 मुरलीधर चतुर्वेदी द्वारा लिखित "अपराध शास्त्र एवं दण्ड शास्त्र" के पृष्ठ संख्या 207 से (1979) 3 (1979) एस0सी0सी0 646 से उद्धृत*
19. *डॉ0 मुरलीधर चतुर्वेदी द्वारा लिखित "अपराध शास्त्र एवं दण्ड शास्त्र" के पृष्ठ संख्या 212 से (1979) 3 (1979) एस0सी0सी0 646 से उद्धृत*
20. *प्रो0 सूर्य नारायण मिश्र द्वारा लिखित भारतीय दण्ड संहिता के पृष्ठ 110 से उद्धृत*
21. *ए0आई0आर0 1989, एस0सी0 143*
22. *गोपाल उपाध्याय द्वारा लिखित "अपराध शास्त्र एवं दण्ड शास्त्र" पृष्ठ 117 से उद्धृत*